(IJPS) 2022, Vol. No. 14, Jul-Dec **e-ISSN: 2455-6270; p-ISSN: 2455-7455**

नैतिक शिक्षा ही सामाजिक मूल्यों की स्थापना का सशक्त माध्यम

***सचिदानंद कुमार, **प्रो0 (डॉ0) चेतलाल प्रसाद**
*शोधार्थी (शिक्षाशास्त्र), साई नाथ विश्वविद्यालय
**प्रोफेसर (शिक्षाशास्त्र), शोध निर्देशक, (माँ वि० शि० प्र० म0)

MORAL EDUCATION IS A POWERFUL MEANS OF ESTABLISHING SOCIAL VALUES

***Sachidanand Kumar, **Prof (Dr.) Chetlal Prasad**
**Research Scholar, (Pedagogy), Sainath University, Ranchi*
***Professor (Pedagogy), Research Supervisor, MV College of Education, Hazaribagh*

ABSTRACT

Telling truth, forgiveness, kindness, honesty, non-violence etc. in the matters of moral education does not achieve much if we do not give the children an opportunity to bring these lofty things into life. In present times our moral values are also changing because due to urbanization, modern civilization, scientific outlook etc. new generation people do not want to stick to all the archaic ideology. Associating moral values with education does not mean that the burden of one more book should be put in the children's bag while getting heavier. Indians used to consider that knowledge as incomplete and shallow, which is not capable of self-realisation. The basic aim of education was to get salvation by getting rid of all debts. "Kastvanko'ham katu importah ko me janani ka me tatah" (Bhajgovindam Adi Shankaracharya), only Indian knowledge can provide answers to these questions. The purpose of value-based education in the Indian knowledge-tradition is mainly the development of devotion to God and spirituality, realization of Satyam, Shivam, Sundaram, character-building, development of all dimensions of personality, development of social duties, tradition and culture of the nation. Protection, emphasis on becoming knowledgeable and making, following religion and truthful conduct, establishing peaceful and pleasant coordination, coordination of knowledge and intelligence, establishing relationship between knowledge and action.

सारांश

नैतिक शिक्षा की बातों में सत्य, क्षमा, दया, ईमानदारी, अहिंसा आदि बताने से कुछ खास हासिल नहीं होता यदि हम इन ऊँची-ऊँची बातों को जीवन में उतारने का बालकों को अवसर न प्रदान करें । वर्तमान समय में हमारे नैतिक मूल्य भी बदल रहे हैं क्योंकि नगरीकरण, आधुनिक सभ्यता, वैज्ञानिक दृष्टिकोण आदि के कारण नई पीढ़ी के लोग सभी पुरातनपंथी विचारधारा से चिपके नहीं रहना चाहते हैं । शिक्षा के साथ नैतिक मूल्यों को संबद्ध करने का अर्थ यह नहीं है कि बालकों के निरंतर भारी होते हुए बस्ते में एक और किताब का बोझ डाल दिया जाए ।भारतीय उस ज्ञान को अधूरा व छिछला मानते थे, जो ज्ञान आत्मदर्शन कराने में समर्थ न हो। शिक्षा का मूल उद्शद्ेय सभी ऋणों से मुक्त होकर मोक्ष प्राप्त करना था। "कस्त्वंकोऽहं कतु आयातः को मे जननी का मे तातः" (भजगोविंदम आदि शंकराचार्य), इन प्रश्नों के उत्तर भी केवल भारतीय ज्ञान ही प्रदान कर सकता है। भारतीय ज्ञान-परंपरा में मूल्य-आधारित शिक्षा का उद्शद्ेय मुख्य रूप से

(IJPS) 2022, Vol. No. 14, Jul-Dec **e-ISSN: 2455-6270; p-ISSN: 2455-7455**

ईश्वर भक्ति व आध्यात्मिकता का विकास, सत्यं, शिवं, सुन्दरम् की अनुभूति चरित्र-निर्माण, व्यक्तित्व के सभी आयामों का विकास, सामाजिक कर्तव्यों का विकास, राष्ट्र की परंपरा व संस्कृति का संरक्षण, ज्ञानवान बनने व बनाने पर बल, धर्मपालन व सत्याचरण का अनुसरण, शांतिपूर्ण व सुखद समन्वय स्थापित करना, विद्या और बुद्धि का समन्वय, ज्ञान व कर्मके मध्य संबंध स्थापित करना था।

परिचय

जब हम शिक्षा की बात करते हैं तो सामान्य अर्थो में यह समझा जाता है कि इसमें हमें वस्तुगत ज्ञान प्राप्त होता है तथा जिसके बल पर कोई रोजगार प्राप्त किया जा सकता है । ऐसी शिक्षा से व्यक्ति समाज में आदरणीय बनता है ।

समाज और देश के लिए इस ज्ञान का महत्व भी है क्योंकि शिक्षित राष्ट्र ही अपने भविष्य को सँवारने में सक्षम हो सकता है । आज कोई भी राष्ट्र विज्ञान और तकनीक की महत्ता को अस्वीकार नहीं कर सकता, जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में इसका उपयोग है । वैज्ञानिक विधि का प्रयोग कृषि और पशुपालन के क्षेत्र में करके ही हमारे देश में हरित क्रांति और श्वेत क्रांति लाई जा सकी है ।

अत: वस्तुपरक शिक्षा हर क्षेत्र में उपयोगी है ।परंतु जीवन में केवल पदार्थ ही महत्वपूर्ण नहीं हैं । पदार्थो का अध्ययन आवश्यक है, राष्ट्र की भौतिक दशा सुधारने के लिए तो जीवन मूल्यों का उपयोग कर हम उन्नति की सही राह चुन सकते हैं । हम जानते हैं कि भारत में लोगों के बीच फैला भ्रष्टाचार किस तरह से विकास की धार को भोथरा किए हुए है ।

हम देखते हैं कि मूल्यों में ह्रास होने से समाज में हर प्रकार के अपराध बढ़ रहे हैं । हम यह भी देखते हें कि मूल्यविहीन समाज में असंतोष फैल रहा है । बेकारी के बढ़ने से युवक असंतोष जैसी कई प्रकार की चुनौतियाँ खड़ी दिखाई देती हैं । छोटे से बड़े नौकरशाह निकम्मेपन और भ्रष्टाचार के अंधकूप में डुबकियाँ लगा रहे हैं, उन्हें समाज या राष्ट्र की कोई परवाह नहीं है ।

इन परिस्थितियों में आत्ममंथन अनिवार्य हो जाता है । क्या हमारी शिक्षा प्रणाली दोषपूर्ण है यदि शिक्षा व्यवस्था त्रुटिहीन है तो निश्चित ही व्यक्तियों में दोष है ? आखिर कहीं ना कहीं तो शीर्षासन चल ही रहा है जो गलत को सही और सही को गलत ठहरने पर आमादा है ।

यदि शिक्षा प्रणाली पर गहराई से दृष्टिपात करें तो सरकारी तौर पर ही इसकी कमियाँ परिलक्षित हो जाएँगी । हमारे देश के आधे से अधिक शिक्षित व्यक्तियों के सामने कोई लक्ष्य नहीं है, उनके सामने अँधेरा ही अंधेरा है ।

जिसने अपने जीवन के पंद्रह बेशकीमती वर्ष शिक्षा में लगा दिए, जिसने इतना समय किसी कार्य के प्रति समर्पित कर दिया, उसके दो हाथों को कोई काम नहीं है । पंद्रह वर्षो के श्रम का कोई प्रतिफल नहीं तो ऐसी शिक्षा बेकार है ।

(IJPS) 2022, Vol. No. 14, Jul-Dec **e-ISSN: 2455-6270; p-ISSN: 2455-7455**

यह ठीक है कि कुछ नौजवान सफल हो गए, उनके भाग्य ने साथ दे दिया लेकिन बाकी लोगों का क्या होगा जिन्हें बचपन से सिखाया गया था कि पढ़ोगे तो शेष जीवन सुखी हो जाएगा । इससे तो कहीं अच्छा था कि वह पाँचवी पास कर चटाई बुनना सीख लेता, घड़े बनाना सीख लेता, कृषि की बारीकियाँ समझ लेता अथवा ऐसा कोई गुण सीख लेता जिससे जीवन-यापन में उसे सुविधा होती ।

यदि कोई खेल ही खेलता, भरतनाट्यम ही सीख लेता, वायलिन बजाना सीख लेता तो भी कुछ सार्थकता होती, इन क्षेत्रों में भी बड़ा सम्मान और धन है ।तो कहा जा सकता है कि यदि दुनियावी दृष्टिकोण से ही देखा जाय, यदि पूर्णतया भौतिकवादी बनकर ही सोचा जाए तो हमारी शिक्षा प्रणाली की बुनियाद ही गलत है ।

इसमें कोई संदेह नहीं कि अक्षर ज्ञान जरूरी है, चौदह वर्ष तक की शिक्षा जरूरी है ताकि बालक जीवन के हर क्षेत्र की मोटी-मोटी बातों को समझ सके । परंतु कॉलेज की डिग्री उतने ही लोगों को दी जानी चाहिए जितने लोग डिग्री लेकर आसानी से रोजगार प्राप्त कर सकें ।

केवल थोड़े से मेधावी लोगों को ऊँची शिक्षा दी जानी चाहिए तथा अन्य छात्रों को रोजगारपरक शिक्षा दी जाए तो बेकारी की समस्या हमारे देश से कुछ वर्षो में ही विदा हो जाएगी । गुरुदेव रवींद्रनाथ जैसे विचारकों ने हमारी शिक्षा प्रणाली की खामियों को समझकर इन्हीं कारणों से एक अलग ढंग की शिक्षा की वकालत की थी ।

यदि शिक्षा व्यवस्था में सचमुच सुधार लाना हो तो शिक्षा में नैतिक मूल्यों का समावेश जरूरी है क्योंकि कोई कार्य यदि सुस्पष्ट नीति के बिना किया जाए तो वह सफल नहीं हो सकता । नीति से ही नैतिक शब्द बना है जिसका अर्थ है सोच-समझकर बनाए गए नियम या सिद्घांत । लेकिन आज की शिक्षा में नैतिक मूल्यों का कोई समावेश नहीं है क्योंकि वह दिशाहीन है ।

आज की शिक्षा का मुख्य उद्देश्य है – पढ़-लिखकर धन कमाना । चाहे धन कैसे भी आता हो, इसकी परवाह न की जाए । यही कारण है कि शिक्षित वर्ग भ्रष्टाचार को बढ़ावा देने में सबसे आगे हैं ।

शिक्षा प्राप्ति की एक सुविचारित नीति होनी चाहिए । छात्रों की शुरू से ही यह जानकारी देनी चाहिए कि जीवन में आगे चलकर तुम्हें किन समस्याओं से जूझना होगा । छात्रों को पता होना चाहिए कि जीने के मार्ग अनेक हैं तथा उस मार्ग को ही चुनना श्रेयस्कर है जो व्यक्ति विशेष के स्वभाव के अनुकूल हो ।

नैतिक शिक्षा की बातों में सत्य, क्षमा, दया, ईमानदारी, अहिंसा आदि बताने से कुछ खास हासिल नहीं होता यदि हम इन ऊँची-ऊँची बातों को जीवन में उतारने का बालकों को अवसर न प्रदान करें । बालकों की सहज बुदधि में प्रयोगात्मक सचाइयाँ अधिक सहजता से प्रवेश करती हैं । कोरे उपदेश उन्हें प्रभावित कर सकते तो आज समाज में इतनी बेईमानी और इतना भ्रष्टाचार न फैला होता ।

शिक्षा के साथ नैतिक मूल्यों को संबद्ध करने का अर्थ यह नहीं है कि बालकों के निरंतर भारी होते हुए बस्ते में एक और किताब का बोझ डाल दिया जाए । इससे उनके जीवन में कोई गुणात्मक परिवर्तन नहीं आ सकता क्योंकि बच्चे समझते हैं कि यह भी एक विषय है जिसमें अच्छे अंक लाने होंगे ।

(IJPS) 2022, Vol. No. 14, Jul-Dec **e-ISSN: 2455-6270; p-ISSN: 2455-7455**

इसका अलग से कोई मतलब नहीं है । इसके बदले यदि हम उन्हें अच्छे माहौल में, विद्यालय परिसर को जीवन की एक प्रयोगशाला बनाकर शिक्षा को किसी उद्देश्य से संयुक्त कर दें तो उनके लिए बहुत हितकारी होगा ।

खेल-खेल में दी गई शिक्षा, ज्ञान को मनोरंजक बनाकर दी गई शिक्षा अधिक प्रभावी होती है । साथ-साथ यदि विद्यालय स्तर से ही प्रत्येक बच्चे के अंदर निहित क्षमता को पहचान कर उसे एक सुनिश्चित दिशा दे दी जाए तो निश्चित ही शिक्षा प्राप्ति का उद्देश्य सिद्ध हो जाएगा ।

वर्तमान समय में हमारे नैतिक मूल्य भी बदल रहे हैं क्योंकि नगरीकरण, आधुनिक सभ्यता, वैज्ञानिक दृष्टिकोण आदि के कारण नई पीढ़ी के लोग सभी पुरातनपंथी विचारधारा से चिपके नहीं रहना चाहते हैं ।

अत: शिक्षा में ऐसे नैतिक मूल्यों को जोड़ने का असफल प्रयास नहीं करना चाहिए जो युगानुरूप नहीं रह गए हैं । इसमें धार्मिक कट्टरता, किसी एक धर्म के प्रति आग्रह जैसा भाव नहीं होना चाहिए क्योंकि इससे शिक्षा बोझिल हो जाती है । सदाचार की वैसी बातें जो सभी धर्मों व सभी संप्रदायों को मान्य है, समाहित कर हम नए, प्रगतिशील समाज की रचना कर सकते हैं ।

नरपतदान चारण। नई शिक्षा नीति लागू करने के लिए नया राष्ट्रीय पाठ्यक्रम ढांचा विकसित करने की प्रक्रिया शुरू कर दी गई है। इस संबंध में डा. के. कस्तूरीरंगन के नेतृत्व में एक समिति विचार विमर्श कर रही है। इसमें बचपन से ही बच्चों में वैज्ञानिक सोच के विकास पर ध्यान दिया जाएगा। साथ ही बच्चों में गणना संबंधी सोच और तर्क करने की क्षमता के विकास पर ध्यान दिया जाएगा। इसमें मौलिक कर्तव्य व अधिकार से जुड़े आयाम शामिल होंगे। लेकिन इन तमाम बातों के बीच एक अहम विषय की कोई चर्चा नहीं हो रही।

हम बात कर रहे हैं नैतिक शिक्षा के अनिवार्य शिक्षण के रूप में रूपरेखा के निर्माण की। दरअसल नई शिक्षा नीति और नवीन पाठ्यक्रम में नैतिक शिक्षा को शिक्षण विषय के रूप में शामिल करने की कोई बात नहीं की गई है। जबकि नैतिक शिक्षा ही सामाजिक मूल्यों की स्थापना का सशक्त माध्यम होती है। यह स्वीकार करना पड़ेगा कि अब तक हमारी शिक्षा प्रणाली मानवीय मूल्य और नैतिक चरित्र कायम करने में कहीं न कहीं नाकाम रही है। यही वजह है कि शिक्षितों के तबके में मानवीयता, संवेदना, विश्वास, सम्मान आदि नैतिक तत्वों का अभाव परिलक्षित हो रहा है। हर रोज अखबारों की खबरें यह प्रमाण देने में काफी है कि उच्च शिक्षित होने का दंभ भरने वाले समाज में दैत्य वृत्ति, निर्दयता, लालच, शोषण, घात, कत्ल, भ्रष्टाचार, ठगी आदि किस तरह से सामाजिक तानेबाने को खोखला कर रहे हैं।

समाज में आज हर जिम्मेदार नागरिक स्वयं को व्यथित पाता है।

क्या आपने इस बात पर कभी गौर किया कि अपराध के लिए कठोरतम सजा का प्रविधान है। कानून की सख्ती है, फिर भी अपराधों के ग्राफ में इजाफा हो रहा है। संज्ञेय अपराध बढ़े हैं। ऐसी दशा में हमें उन अन्य बातों पर विचार करना होगा जो समाज के अपराध मुक्ति में सहायक हो। इस स्थिति में शिक्षा से इसके सहसंबंध को देखा जाना महत्वपूर्ण हो जाता है। विशेषतया नैतिक शिक्षा की उपयोगिता को। यह भी हैरानी वाली बात है कि नैतिकता को अक्सर नैसर्गिक गुण बताकर इसे किसी को सिखाने से परहेज करने के कुतर्क को अक्सर हवा मिलती रही है। लेकिन सही अर्थ में नैतिकता सामाजिक गुण है, जिसे समाज द्वारा किसी व्यक्ति में प्रतिस्थापित किया जा सकता है। इस तरह अपराध नियंत्रण में नीतिपरक शिक्षा एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। नीति और मूल्य आधारित शिक्षा द्वारा चरित्र निर्माण होने पर सरकार को अपराध नियंत्रण पर कोई अतिरिक्त खर्च नहीं करना पड़ेगा।

समझना होगा कि समाज के नैतिक पतन का सीधा सा संबंध शिक्षा से जुड़ा है। वर्तमान शिक्षा व्यवस्था की यह खामी है कि देश में जिस तरह के नैतिक आचार-व्यवहार का परिचय दिया जाना चाहिए उसे यह प्राप्त करने में असफल रही है। वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में भौतिकता की अधिकता है और नैतिकता का अभाव। दरअसल शिक्षा ही मानवीय और नैतिक मूल्यों की स्थापना का सशक्त माध्यम है। हमारी शिक्षा का दर्शन सामाजिक और मानवीय होना चाहिए। यह एक सीमा तक सही है कि हम रोजगारपरक शिक्षा से डाक्टर, इंजीनियर, विज्ञानी, उद्यमी तैयार कर रहे हैं, मगर नकारात्मक पहलू यह है कि इसी शिक्षा पद्धति से हम अपने संस्कारों और समाज के मूल्यों को हटा रहे हैं। जरूरत है ऐसी शिक्षा व्यवस्था की जो पूर्णतया शोषणमुक्त और न्यायसंगत समाज का निर्माण करने में सहायक हो। यह लक्ष्य तभी पूरा किया जा सकता है जब स्कूल और कालेज में नैतिक शिक्षा का पाठ अनिवार्य रूप से पढ़ाया जाए। यहां नैतिक शिक्षा देने से मतलब केवल पाठ्यपुस्तक और परीक्षा से नहीं है। इसका मतलब आदर्श मूल्यों, आदर्श पुरुषों, आदर्श महिलाओं, आदर्श कार्यों से जुड़ी सीख अकादमिक शिक्षा के साथ देने से है।

स्मरणीय यह भी है आज से करीब तीन चार दशक पहले तक नैतिक शिक्षा को अनिवार्य विषय के रूप में पढ़ाया जाता था। बाद में इसे किसी षड्यंत्र के तहत हटाया गया। विगत कई वर्षों से शिक्षा का एकमात्र उद्देश्य बच्चों को रोजगार और आजीविका के लिए सक्षम बनाना रह गया है। यदि हम अपने वेदों और पुरातन साहित्य में वर्णित

प्राचीन शिक्षा के प्रकार पर विमर्श करें तो पाएंगे कि उनमें वर्णित शिक्षा का उद्देश्य बच्चों को जीवन के लिए तैयार करना था, मात्र जीविका के लिए नहीं। और शायद यही कारण था कि ऐसी शिक्षा से उत्पन्न हुई पीढ़ी नैतिक मूल्यों से सुसज्जित समाज का निर्माण करती थी। यदि एक देश का विद्यार्थी नैतिक मूल्यों से रहित होगा, तो उस देश का कभी विकास नहीं हो सकता। शरीर विज्ञान के अनुसार नैतिकता पर आधारित चरित्रवान व्यक्ति का मानसिक संतुलन सदैव बना रहता है। पाठ्यक्रम में नैतिक शिक्षा अनिवार्य करने से छात्रों में राष्ट्रीय चरित्र विकसित होगा।

उच्च आदर्श चरित्र निर्माण ही राष्ट्र की रीढ़ है। इसलिए बच्चों को सदाचारी और जिम्मेदार जीवन जीने की शिक्षा दी जानी चाहिए, न कि केवल आजीविका कमाने की। यह भी जानना चाहिए कि नैतिक मूल्यों का विस्तार व्यक्ति से विश्व तक और जीवन के सभी क्षेत्रों में होता है। व्यक्ति-परिवार, समुदाय, समाज, राष्ट्र से मानवता तक नैतिक मूल्यों की यात्रा होती है। एक-एक अच्छे व्यक्ति से एक अच्छा परिवार बनेगा, एक-एक अच्छे परिवार से एक अच्छा समाज और एक अच्छा समाज सुसभ्य देश की पहचान बनेगा।

प्राचीन औऱ वर्तमान शिक्षा पद्धति औऱ मानव मूल्य---

शिक्षा का क्षेत्र हमेशा से ही बहुत व्यापक रहा है वर्तमान समय की शिक्षा में केवल परीक्षाओं और डिग्रियाँ दिये जाने का चलन है। संभव है आरम्भ में इससे कुछ लाभ हुआ हो पर आजकल तो इसका स्वरूप अत्यन्त विकृत तथा भ्रष्ट हो गया। छल, कपट, बेईमानी, रिश्वत आदि किसी भी साधन से परीक्षोत्तीर्ण होने का प्रमाणपत्र प्राप्त कर लेना ही इस समय अधिकाँश विद्यार्थियों का लक्ष्य दिखलाई पड़ता है। इससे शिक्षा का मूल्य घटता जाता है और बी. ए., एम. ए. पास व्यक्ति चपरासी तक की नौकरी करते दिखलाई पड़ते हैं। इस प्रकार की झूठी सनदों के बजाय प्राचीन काल के छात्र शिक्षा समाप्त कर लेने पर कोई महत्व का कार्य करके दिखलाते थे और उसके द्वारा अपनी योग्यता का प्रमाण देते थे।

वास्तव में शिक्षा का संपर्क स्कूली पठन-पाठन से ज्यादा नहीं है। और जिसे सुशिक्षा कहा जाता है वह तो दूसरी ही चीज है। आज कल दुनिया की निगाह में शिक्षा का मुख्य लक्षण कोई अच्छी सी नौकरी कर सकना अथवा किसी अन्य बड़े समझे जाने वाले पेशे के द्वारा जीविकोपार्जन करना समझा जाता है। क्योंकि इन सभी कामों में लिखना-पढ़ना अनिवार्य होता है इसलिए आजकल इन कामों में सफल होने वाले व्यक्ति ही शिक्षित समझे जाते हैं।

यही सब से बड़ा अंतर प्राचीन और अर्वाचीन शिक्षा प्रणाली में है। उस समय कागज, कलम और पुस्तकें लेकर पढ़ने-लिखने का अभ्यास करने के बजाय विद्यार्थी का चरित्र गठन करना और जीवन संग्रह में उसे अपना और दूसरों का हित कर सकने योग्य बनाना शिक्षा का मुख्य उद्देश्य था। दूसरा उद्देश्य यह था कि

(IJPS) 2022, Vol. No. 14, Jul-Dec **e-ISSN: 2455-6270; p-ISSN: 2455-7455**

मनुष्य को केवल भौतिकता की तरफ दृष्टि रखने वाला न बनाकर वह उसके जीवन को आध्यात्मिकता की तरफ मोड़ती थी। क्योंकि जो व्यक्ति दूसरे व्यक्तियों को अपने समान समझकर उनके हित-अनहित का ध्यान न रखेगा वह समाज के लिए कभी श्रेष्ठ नागरिक सिद्ध न होगा। जो स्वार्थी व्यक्ति भौतिक लाभों को ही सब कुछ समझकर अपनी बुद्धि का उपयोग अपने लिए अधिक से अधिक सामग्री प्राप्त करने और दूसरों को उससे वंचित रखने में करता है वह प्राचीन आदर्श की कसौटी पर निस्संदेह एक पढ़ा-लिखा मूर्ख है। उसे सुशिक्षित कहना शिक्षा का अपमान करना है।

कुछ व्यक्ति प्राचीन शिक्षा पद्धति में यह दोष बतलाते हैं कि उसका क्षेत्र बहुत संकुचित था और उस समय के विद्यार्थियों का दृष्टिकोण उतना व्यापक न बन पाता था जितना कि आजकल। हम यह मान सकते हैं कि प्राचीन समय में शिक्षा का स्वरूप मुख्यतया धार्मिक ही होता था और अधिकाँश विद्यार्थी पूजा-पाठ, स्तुति तथा कुछ कर्मकाण्ड सम्बन्धी बातों के अतिरिक्त अन्य विषयों का ज्ञान कदाचित ही प्राप्त करते थे। और यह भी सच है कि उस समय शिक्षा-संस्थाओं में प्रवेश करने वाले विद्यार्थियों की संख्या समस्त आबादी के अनुपात से बहुत अल्प होती थी। पर उस समय की सामाजिक अवस्था और व्यवस्था ही आजकल से सर्वथा भिन्न थी और उस समय का समाज मुख्य रूप से कृषि प्रधान था। खेती-बाड़ी का काम करने वालों के लिए साहित्य और विज्ञान की शिक्षा तो आजकल भी सुलभ नहीं है और गाँवों की 90 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या निरक्षर ही है। उस समय उद्योग धन्धे भी हाथ की कारीगरी के रूप में किये जाते थे और उनका उद्देश्य विशेषतः किसानों की आवश्यकता की वस्तुएँ बनाना ही था। बड़े-बड़े नगरों की संख्या कम थी और वैदेशिक व्यापार बहुत सीमित रूप में किया जाता था। फिर उस समय शिक्षा का उद्देश्य केवल किताबी शिक्षा ग्रहण करके कोई उपाधि प्राप्त कर लेना नहीं था, वरन् प्रत्येक को उसकी जीवन की आवश्यकताओं के अनुरूप शिक्षा दी जाती थी।

इस दृष्टि से सब से पहली बात तो हम यही समझते हैं कि शिक्षा पद्धति में कोरी जानकारी की अपेक्षा गुणों का महत्व अधिक होना चाहिए। प्राचीन काल के विद्यार्थियों के पास चाहे आजकल के स्कूली लड़के-लड़कियों की तरह पुस्तकों और कापियों के ढेर नहीं लगे रहते थे और न उनमें से प्रत्येक को भूगोल और इतिहास से लेकर विज्ञान के आविष्कारों तक की पाठ्य पुस्तकें पढ़नी पड़ती थीं, पर उस समय जो कुछ सिखलाया जाता था वह जीवन भर के लिए उपयोगी होता था और उसे ऐसा पक्का कर दिया जाता था कि मनुष्य उसे कभी भूल नहीं सकता था। हम नहीं समझते कि दुनिया भर की बातों की जबानी जानकारी प्राप्त कर लेने की चेष्टा करना, पर व्यवहारिक कार्य के नाम पर शून्य होना कहाँ की बुद्धिमत्ता है।

सबसे महान त्रुटि वर्तमान शिक्षा प्रणाली में यह है कि यह विद्यार्थियों के चरित्र का निर्माण करने के बजाय उसका नाश कर देती है और नवयुवकों को जीवन के आरम्भ से ही काम, क्रोध, लोभ, मद, मत्सर आदि का

(IJPS) 2022, Vol. No. 14, Jul-Dec **e-ISSN: 2455-6270; p-ISSN: 2455-7455**

दास बना देती है। इसी का परिणाम है कि जब बीस-पच्चीस वर्ष की आयु में आजकल के विद्यार्थी बी. ए., एम. ए. के डिग्रियाँ, लेकर जीवन-क्षेत्र में प्रवेश करते हैं तो वे प्रायः निर्बल, निस्तेज और अनेक प्रकार की आधि-व्याधि के शिकार दिखलाई पड़ते हैं। प्राचीन समय के छात्र चौबीस पच्चीस वर्ष तक ब्रह्मचर्य का पालन करके और हर तरह के कठोर जीवन को सहन करके पूर्ण शक्ति और उत्साह के साथ जीवन-संग्राम में पदार्पण करते थे और आत्म-विश्वास के साथ प्रत्येक परिस्थिति का सामना करने को प्रस्तुत रहते थे। यही दोनों प्रणालियों का सर्वप्रधान अन्तर है और उपरोक्त उद्देश्य को सम्मुख रखकर ही हमको अपनी शिक्षा-पद्धति का पुनः निर्माण करना चाहिए।

आज की भौतिकवादी युग मे शिक्षा की वर्तमान प्रणाली एक भौतिक सुख की जरूरत बन के रह गई है जिसमे कंही ना कंही मानव मूल्य का निरन्तर ह्रास सा हुआ है,इसलिये जरूरी है कि शिक्षा का अंतिम लक्ष्य चरित्र निर्माण औऱ मानव मूल्य का निर्माण होना चाहिए।

भारतीय ज्ञान परंपरा में मूल्य-आधारित शिक्षा प्राचीनकाल से ही भारत की गौरवगरिमा पूरे विश्व में संव्याप्त रही है। इसी ज्ञान-परंपरा की वजह से भारत 'विश्व गुरु' कहलाता आया है। भारत 'ज्ञान' शब्द का पर्याय माना जाता रहा है। इस भारतभूमि से उत्पादित ज्ञान संसार के कोने-कोने को चिरकाल से ही लौकिक करता आ रहा है। ज्ञान-विज्ञान की संपत्ति की समर्थता का कोई ऐसा पक्ष न था, जिससे इस देश के नररत्न सुसंपन्न न रहे हो। इस भारत भूमि की महान् उपलब्धियाँ इतनी आकर्षक और उपयोगी थीं कि संसार के कोने-कोने से लोग इन्हें सीखने-समझने आते थे। यही वह प्राचीन पवित्र धारा है, जहाँ तत्त्वज्ञान ने आकर इसे अपना निवासस्थान बनाया। यही वह भारतभूमि है, जहाँ के ज्ञान का आध्यात्मिक प्रवाह पूरी दुनिया पर अपना प्रभाव छोड़ता आया है। इसी आर्यावर्त्त की भूमि पर संसार के सर्वश्ष्ठ ऋ रे षियों की चरणरज पड़ी है, जिन्होंने भारत को पूरे संसार में ज्ञान का पर्याय बनाया व विश्व कल्याण के लिए अपना संपूर्ण जीवन समाज के नाम कर दिया। इसी भारतभूमि पर सबसे पहले मनुष्य, प्रकृति तथा अंतर्जगत् के रहस्योद्घाटन की जिज्ञासाओं का अंकुर फटा था, ू जिसने इस ज्ञान-परंपरा को जन्म दिया। इसी परंपरा के तहत आत्मा का अमरत्व, सर्वव्यापी ईश्वर तथा मनुष्य के भीतर सर्वव्यापी, कण-कण में निवास करनेवाले परमात्मा विषयक मत-वादों का पहले पहल उद्भव हुआ। कहा जाता है, जब विश्व के अन्य देशों की सभ्यताएँ व परंपराएँ अपनी शैशव अवस्था में थीं, तब भारतभूमि में नालंदा, तक्षशिला तथा वल्लभी जैसे विश्वविद्यालय इस ज्ञान-परंपरा से जगमगा रहे थे, जो यहाँ आनेवाले दीपक रूपी छात्रों को प्रकाशित भारतीय ज्ञान परंपरा में मूल्य-आधारित श • 123 कर रहे थे। सच्चे अर्थों में तो संपूर्ण भारत ही पूरे विश्व को अपने मूल्य-आधारित ज्ञान से प्रकाशित कर रहा था। भारत में ही धर्म और दर्शन के आदर्शों ने अपनी चरम उन्नति प्राप्त की थी। यही से उमड़ती हुई नदी की धारा ने धर्म, नीति और दार्शनिक तत्त्वों के कक ड़ों को बहाते हुए समग्र संसार को आप्लावित कर दिया था। इसी ज्ञान परंपरा ने धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष को इस अर्थ में गढ़ा कि संसार का अन्य ज्ञान इसके सामने फीका रह गया। यह वही भारत है, जो शताब्दियों से विदेशी आक्रांताओं के शत-शत आक्रमण और सैकड़ों बार लूटपाट के दश सहकर भी अक्षय बना हुआ है, जिसका मूल कारण भारत की वो ज्ञान चेतना व मूल्य हैं, जो आज भी कहीं-न-कहीं बिंदु स्वरूप में ही सही परंतु कण-कण में विद्यमान है। इसी ज्ञान परंपरा व मूल्यों की उपज

(IJPS) 2022, Vol. No. 14, Jul-Dec **e-ISSN: 2455-6270; p-ISSN: 2455-7455**

होने की वजह से आज भी हम विश्व बंधुत्व व रामराज्य का सपना देखते हैं, जहाँ किसी भी प्रकार का ताप व संताप (दैहिक, दैविक, भौतिक) न हो। वैदिक काल में शिक्षा मात्र कर्मकांड से संबंधित नहीं थी, वरन् छात्र का जीवन के प्रति दृष्टिकोण विकसित हो जाए, वह सुसंस्कृत व सुचरित्र बन जाए, इस पर शिक्षा आधारित थी। यह भारत भूमि हमेशा से ही धार्मिक, आध्यात्मिक एवं नैतिक शिक्षा का कद्रें रही है व आज भी अपने इतिहास को गौरवान्वित करती हुई भविष्य के लिए भी एक आशा की किरण के तौर पर प्रकाशित होती रहेगी। भारतीय दर्शन के मूलभूत तत्त्व के रूप में 'कर्मयोग' हमेशा ही भारतीय जनमानस का पथ-प्रदर्शन करता रहा है एवं करता रहेगा। आज भी हमारी गौरवमयी परंपरा हमें सत्य की ओर बढ़ने की प्रेरणा देती है और अज्ञानरूपी अंधकार से दूर रहने का मार्ग बताती है। 'विद्या ददाति विनयम्' ध्येय को सिद्ध करना ही भारतीय ज्ञान परंपरा की मूल्य-आधारित शिक्षा का कद्रें बिंदु है। गुरु-शिष्य परंपरा व वाणी और मन की अक्षतता इसी मूल्य-आधारित ज्ञान परंपरा व शिक्षा का प्राणबिंदु है। हिंदू धर्मके पवित्रतम ग्रंथ 'श्रीमद्भगवद्गीता' में ज्ञान परंपरा की महत्ता पर बल देते हुए स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण ने कहा है, "न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते (4 : 48)।" अर्थात् इस संसार में ज्ञान के समान पवित्र अन्य कुछ भी नहीं है। छात्रों में ज्ञान के मूल्य को स्थापित करने के साथ ही हमें यह भी स्पष्ट करना होगा कि यह ज्ञान शक्ति प्रदर्शन हेतु या किसी अन्य व्यक्ति या राष्ट्र पर 124 • मूल्य आधारित शिक्षा अपना वर्चस्व स्थापित करने की कामना से नहीं वरन् स्वयं को संयमित रखने व अपनी पाशविक प्रवृत्तियों (जो कि प्रत्येक मानव में स्वाभाविक रूप से रहती है) के क्षरण के लिए होना चाहिए, इसी में ज्ञान की सार्थकता है। विश्व में सर्वप्रथम मानव मूल्यों से आप्लावित ज्ञान की किरण भारत से ही प्रस्फुटित हुई। सबसे पहले ऋग्वेद की अपुरुषेय रचना हुई, उसके उपरांत अन्य वेद उपनिषद् व दर्शनशास्त्रों की रचना हुई। वेद शब्द का अर्थ ही ज्ञान है। वैदिक काल के नाम से विख्यात वह स्वर्णिम युग भारत को युग-युगांतर तक ज्ञान की ज्योति से प्रकाशित करता रहेगा। विद्या-अध्ययन के कद्रें गुरुकुल थे। जहाँ गुरु को सर्वपूज्य मानकर 'महेश्वर' का दर्जा देकर वंदना की जाती थी। गुरु शिष्य में प्रायः पिता-पुत्र का संबंध होता था। गुरु अपने शिष्य को निस्स्वार्थ भाव से शिक्षा प्रदान करके उसके सर्वांगीण विकास को अपना परम ध्येय समझते थे। गुरु अपने अंदर विद्यमान समस्त परा व अपरा विद्या को शिष्य को प्रदान करते थे। शिष्य भी अपने गुरु को सर्वस्व मानकर उस शिक्षा को तत्परता और तल्लीनता से ग्रहण करते थे। भारतीय उस ज्ञान को अधूरा व छिछला मानते थे, जो ज्ञान आत्मदर्शन कराने में समर्थ न हो। शिक्षा का मूल उद्शद्ेय सभी ऋणों से मुक्त होकर मोक्ष प्राप्त करना था। "कस्त्वंकोऽहं कतु आयातः को मे जननी का मे तातः" (भजगोविंदम आदि शंकराचार्य), इन प्रश्नों के उत्तर भी केवल भारतीय ज्ञान ही प्रदान कर सकता है। भारतीय ज्ञान का कद्री ेंं य तत्त्व है—अध्यात्म। भौतिकता के साथ आध्यात्मिकता का समन्वय यहाँ की सर्वोपरि विशेषता है, जिसे कहीं अन्य नहीं देखा गया है। यहाँ 'तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा' का सूत्र भोग के साथ-साथ त्याग करने की प्रेरणा व मूल्य भी प्रदान करता है। भारतीयों की आध्यात्मिक व नैतिक चेतना ही उनका जीवन रक्त है। भारत की राजनीति भी प्राचीनकाल से ही मूल्यों की राजनीति है। चाणक्य नीति का स्थान इस क्त्र में स ष र्वोपरि है, प्रजा का हित अथवा प्रजातंत्र का मूल्य ही भारतीय राजनीति की मूल अवधारणा है। प्राचीनकाल से लेकर आधुनिक काल तक न्याय व्यवस्था का स्वरूप लगभग समान है। जहाँ न्याय के तराजू का आधार केवल व केवल सत्य है। न्याय की दृष्टि में राजा व प्रजा समान है। भारतीय ज्ञान परंपरा में मूल्य-आधारित श • 125 यहाँ पर विज्ञान आज की खोज या देन नहीं माना जाता है। यह अत्यंत प्राचीन विद्या है। भारतीय ऋषियों व मनीषियों ने जो ज्ञान का भंडार अपनी योग शक्ति द्वारा समस्त मानवजाति को विभिन्न ग्रंथों के रूप में प्रदान किया है, उसका ऋण कोई भी नहीं चुका सकता। आज का विज्ञान प्रकृति के दोहन व शोषण को बढ़ावा देता है, परंतु प्राचीन विज्ञान प्रकृति के साथ समन्वय बनाकर आत्मीयता व नैतिकता को

(IJPS) 2022, Vol. No. 14, Jul-Dec **e-ISSN: 2455-6270; p-ISSN: 2455-7455**

संबल प्रदान करनेवाला था। प्राचीन भारत में प्रकृति के प्रत्येक घटक की महत्ता सिद्ध करने व उसके संरक्षण, संवर्धन करने हेतु उसको जनमानस की आस्था से जोड़ दिया गया था। भारत की सबसे बड़ी नदी गंगा को माता के समान जीवनदायिनी मानकर पूजने के पीछे यही कारण है। पर्यावरण संरक्षण का मूल्य ही था कि हिंदू दर्शन में एक वृक्ष को दस पुत्रों के समान माना गया है— 'दशकूपसमा वापी दशवापीसमो ह्रदः। दशह्रदेसमः पुत्रो दशपुत्रसमो द्मरुः॥' आज वृक्षारोपण के महत्त्व अर्थात दस कुँओं के बराबर एक बावड़ी होती है दस बावड़ी के बराबर एक सरोवर, दस सरोवर के समान एक पुत्र एवं दस पुत्रों के समान एक वृक्ष का महत्त्व होता है व लाभ की पूरा विश्व सराहना कर रहा है। वैदिक वाङ्मय में स्पष्ट उल्ख ले मिलता है कि "वृक्षाद् वर्षति पर्जन्यः पर्जन्यादन्नसम्भवः", अर्थात् वृक्षारोपण से वर्षा होती है एवं वर्षा से अन्न उत्पन्न होता है। प्रकृति संरक्षण का यह मूल्य भारतीय ज्ञान-परंपरा द्वारा विश्व को प्रदान की गई अनुपम भेंट है। जीवन के विविध पक्षों को जानने एवं इस पर सार्थक प्रयोग करने के लिए जीवन विज्ञान का उपयोग अत्यंत पुरातन है, जो समस्त विश्व को भारत की ही देन है। भारत और भारतीय ज्ञान मूल्य-आधारित है, जो कि एक अजेय शक्ति है। यही भारतीय शिक्षा का प्राचीनकाल से आधारभूत तत्त्व रहा है। जो भारतीयों को मूल्यों के साथ जीवन जीने की शिक्षा देता है व 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना को बल प्रदान करता है। भारतीय ज्ञान परंपरा में शिक्षा का अंतिम लक्ष्य जीवनयापन के साथ ही आत्मा के अमरत्व को प्राप्त कर परमात्मा में मिल जाना व 'सत्यं, शिवं, सुंदरम्' को साकार कर जीवन के परम उद्शद्ेय सत्-चित्-आनंद को प्राप्त करना है। 126 • मूल्य आधारित शिक्षा ज्ञान, परंपरा व मूल्य-आधारित शिक्षा प्राचीन भारतीय ज्ञान परंपरा व शिक्षा प्रणाली अपने आप में अनुपम है। शिक्षा का जो सबसे मुख्य पहलू है, वह है छात्रों में मूल्यों का विकास करना, क्योंकि ज्ञान, अनुशासन व मूल्यों के बिना उनके जीवन का मर्म ही खो जाएगा, परिणामस्वरूप धीरे-धीरे पूरे समाज की नींव खोखली होती जाएगी। वह मनुष्य होते हुए भी पशुत्व जीवन जीने के लिए मजबूर हो जाएगा। भारतीय ग्रंथ, वेद, पुराण, उपनिषद्, नीति शास्त्र, ज्ञान, अनुशासन, सहनशीलता, परोपकार, शांति, धर्मपरायणता व कर्मका संदेश देते हैं, जो कि किसी भी समाज को प्रगतिशील बनाने में सहायक होता है। प्राचीनकाल से ही भारतीय गुरुकुल परंपरा का शिक्षा प्रणाली में अनूठा स्थान है। भले ही आज आधुनिकता की दौड़ में यह गुरुकुल प्रथा कहीं लुप्त हो गई है, लेकिन वापस वही गौरवमयी इतिहास प्राप्त करने के लिए समाज को गुरुकुल शिक्षा पद्धति को वर्तमान समाज की आवश्यकताओं के अनुरूप ढालकर किसी अन्य रूप में अवश्य अपनाना चाहिए व मूल्य-आधारित शिक्षा के प्रकाश-पुंज से भारतीय परंपरा व गौरव को उज्ज्वल करना चाहिए। मूल्य-आधारित शिक्षा छात्रों के चरित्र-निर्माण में सहायक होगी। मूल्य-आधारित शिक्षा का अर्थ है, वह शिक्षा जिससे मानव-जीवन का पूर्ण एवं सर्वांगीण विकास हो सके। मूल्य-आधारित शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात् छात्र के अंदर धर्म, अर्थ, ध्यात्म, ज्ञान व नैतिकता की चेतना आ सके, उसका आचरण समाज के अनुकूल हो। वह अपना व समाज दोनों के लिए ही हितकर सिद्ध हो सके। मूल्य-आधारित शिक्षा प्राप्त कर व्यक्ति सांसारिक व पारमार्थिक विकास को उपलब्ध कर सके। यही प्राचीन भारतीय ज्ञान परंपरा थी, जिसके अंतर्गत गुरु अपने शिष्य को एक कुम्हार की तरह कच्ची मिट्टी से सुंदर बरतनों का आकार प्रदान करता था, अर्थात् उसका सर्वांगीण विकास करके उसे भौतिक व अलौकिक शांति के पथ पर अग्रसर करता था। छात्र भी स्वयं को विश्व शांति के दूत के रूप में प्रतिष्ठित करते थे। धर्म, अर्थकाम और मोक्ष के मध्य समन्वय बनाने की कला भारतीय शिक्षा प्रणाली सिखाती थी, परंतु आज विडंबना इस बात की है कि इन चार स्तंभों में समन्वय न बनाते हुए केवल अर्थ व काम पर ही कार्य किया जाता है, जिससे हमारे मूल्यों का धीरे-धीरे ह्रास होता जा रहा है। भारतीय ज्ञान परंपरा में मूल्य-आधारित श • 127 मूल्य-आधारित शिक्षा के तहत गुरुकुलों में वेदों का अध्ययन कराया जाता था। सच का आचरण रखते हुए दान, तप, यज्ञ को छात्रों को अपने दैनिक

(IJPS) 2022, Vol. No. 14, Jul-Dec **e-ISSN: 2455-6270; p-ISSN: 2455-7455**

जीवन में अपनाना होता था। समाज के लिए बने नियमों का उत्कृष्ट ग्रंथ मनुस्मृति छात्रों को धृति, क्षमा, दम, अस्तेय, शौच, इंद्रिय निग्रह, सत्य व अक्रोध की शिक्षा देता है। जिससे छात्र अपने जीवन में कभी असफल न हों। उपनिषद् 'दया', 'दमयता' व 'दयाध्वम' को जीवन मूल्यों के रूप में अपनाने की ओर पथ-प्रदर्शित करता है। वैदिक काल के पश्चात् बौद्ध व जैन दर्शन में भी मूल्य-आधारित शिक्षा पर विशेष बल दिया गया। बौद्ध व जैन दर्शन भी सत्य, अहिंसा, अपरिग्रह, ब्रह्मचर्य जैसे महान् मूल्यों को अपनाने की शिक्षा देता है। इसके अतिरिक्त वेदांत दर्शन भी मूल्यों को ही महत्त्व देता है। जीवन में मित्रता, करुणा, उपकार, जीवों पर दया भारतीय ज्ञान परंपरा की शिक्षा प्रणाली के मुख्य आधार बिंदु रहे हैं। श्रीमद्भगवतगीता, जो कि ईश्वर की स्वयं की वाणी हैं, जो पूरी मानव सभ्यता के लिए एक अनुपम भेंट है, वह भी नैतिक मूल्यों को अपनाते हुए धर्मपरायण व निष्काम कर्मकरने की प्रेरणा देती है। 'अहम से वयम' की यात्रा करना ही मूल्य-आधारित शिक्षा का ध्येय है। भारतीय परंपरा, मातृदेवो, पितृदेवो व अतिथिदेवो भवः की सीख देती है, जिस पर चलकर मनुष्य समाज एक उत्कृष्ट जीवन-शैली को प्राप्त कर सकता है। भारतीय मूल्यों में परोपकार का सदैव उच्च स्थान रहा। बिना किसी प्रतिकार की आशा करते हुए दूसरे पर उपकार के मूल्य की ग्रंथों में प्रशंसा की गई है। 'अष्टादश पुराणेषु व्यासस्य वचयद्दयम्, परोपकारः पुण्याय पापाय परपीड़नम्।' इन्हीं मूल्यों पर चलकर आज भी वास्तविक शांति एवं प्रसन्नता प्राप्त की जा सकती है। आधुनिक शिक्षाविदों ने भी मूल्य-आधारित शिक्षा को अपनाने पर बल दिया है। स्वामी विवेकानंद, महात्मा गांधी, श्री अरविंद आदि सभी विद्वान् भारतीय ज्ञान परंपरा को अपनाने पर बल देते हैं। स्वामी विवेकानंद के मतानुसार छात्रों के अंदर निहित प्रतिभा को मूल्य-आधारित शिक्षा द्वारा सींचकर बाहर निकालने को ही सही अर्थों में शिक्षा कहना उचित होगा। महात्मा गांधी भी छात्रों को स्वावलंबी बनने की तालीम देकर देश व समाज के लिए हितकर बनने को ही शिक्षा का अर्थ मानते थे। श्री रवींद्रनाथ ठाकुर भी एक ऐसे समाज की कल्पना करते हैं, जहाँ मनुष्य 128 • मूल्य आधारित शिक्षा सभी प्रकार के भयों से मुक्त होकर एक शांतिपूर्ण जीवन जी सकें। श्रीअरविंद भी मूल्य-आधारित शिक्षा पर बल देते हैं, उनके अनुसार, "जबसे जीवन-मूल्यों का शिक्षा से विद्रोह हो गया है, तब से देशवासी धर्मभ्रष्ट तथा लक्ष्यभ्रष्ट हो गए हैं।" सन् 1947 में भारत को अंग्रेजों की गुलामी से स्वतंत्रता प्राप्त करने के पश्चात् आए हुए शिक्षा आयोगों ने भी मूल्य-आधारित शिक्षा को उचित ठहराते हुए महत्त्वपूर्ण सुझाव दिए। राधाकृष्णन आयोग (1948-49) ने धर्मनिरपेक्षता, आध्यात्मिक ज्ञान व नैतिक मूल्यों पर विशेष बल दिया। इस आयोग ने 'ध्यान' को विशेष रूप से विद्यालयों को अपनाने का सुझाव दिया। छात्रों को धर्मग्रंथों का सार पढ़ाने का भी सुझाव इस शिक्षा आयोग द्वारा दिया गया। उसके पश्चात् आए 'मुदालियर आयोग' (1952-53) ने भी विद्यालयों में सामूहिक प्रार्थना व प्रेरक-प्रसंगों को छात्रों के दैनिक जीवन में समावेश करते हुए उनके चरित्र-निर्माण पर बल दिया। 'कोठारी आयोग' (1964) के अनुसार भी छात्रों के नैतिक, आध्यात्मिक व चारित्रिक गुणों के विकास पर विशेष बल दिया गया। आज के आधुनिक दौर में भारतीय ज्ञान प्रणाली लुप्त होती जा रही है। शिक्षा केवल व्यवसायपरक होकर छात्रों को जीवन में अर्थके पीछे भागने पर बल दे रही है। भारतीय ज्ञान-परंपरा में मूल्य-आधारित शिक्षा का उद्शद्ेय मुख्य रूप से ईश्वर भक्ति व आध्यात्मिकता का विकास, सत्यं, शिवं, सुन्दरम् की अनुभूति चरित्र-निर्माण, व्यक्तित्व के सभी आयामों का विकास, सामाजिक कर्तव्यों का विकास, राष्ट्र की परंपरा व संस्कृति का संरक्षण, ज्ञानवान बनने व बनाने पर बल, धर्मपालन व सत्याचरण का अनुसरण, शांतिपूर्ण व सुखद समन्वय स्थापित करना, विद्या और बुद्धि का समन्वय, ज्ञान व कर्मके मध्य संबंध स्थापित करना था। सही मायनों में भारतीय ज्ञान-परंपरा की यह शिक्षा नीति अपने आप में पूर्ण है, जो मनुष्य को इहलोक से परलोक तक की यात्रा को सुगमता से पूर्ण करने योग्य बनाती है। मूल्य-आधारित शिक्षा व्यक्ति को पूर्णता प्रदान करती है। इन मूल्यों से युक्त होकर व्यक्ति कभी

(IJPS) 2022, Vol. No. 14, Jul-Dec **e-ISSN: 2455-6270; p-ISSN: 2455-7455**

भी अज्ञान रूपी अधर में नहीं फँसता है, वरन् 'विश्व बंधुत्व' व 'सर्वे भवन्तु सुखिनः' का ध्येय वाक्य लेकर जीवन-पथ पर धर्मका साथ देते हुए आगे बढ़ता है। यह हमारे ज्ञान-परंपरा की ही देन है कि आज भी भारत देश अपनी गौरवमयी गरिमा के साथ दिव्य रूप में पूरे संसार में जगमग है व 'विश्व गुरु' की संज्ञा रखता है।

भारत का बदलता परिवेश आधुनिकता के दौर में भारतीयों का अपने ज्ञान-परंपरा व मूल्यों को भूल जाना आज भारतीय समाज के लिए सबसे बड़ी समस्या बनता जा रहा है। आज विद्यार्थी एक प्रशिक्षार्थी बनकर रह गया है। वह ज्ञानार्जन नहीं वरन् जीवन-यापन हेतु प्रशिक्षण मात्र प्राप्त कर रहा है। पाश्चात्य जगत् की चकाचौंध भरी जिंदगी किशोरों के लिए आकर्षक बनती जा रही है, जिससे वे अपनी जड़ों को भूलते जा रहे हैं। जिस कारण उनका जीवन केवल व्यावसायिक शिक्षा में पढ़कर खोखला होता जा रहा है और वे अपने जीवन का मर्म खोते जा रहे हैं। मनुष्य के चरित्र का निर्माण माता के गर्भ से ही होना शुरू हो जाता है, उसके बाद उसकी शैशवावस्था अनुकरणी अवस्था होती है, फिर आती है किशोरावस्था, जो अत्यंत संवेदनशील अवस्था होती है। इस अवस्था में बालक का मानसिक, शारीरिक, बौद्धिक व भावनात्मक विकास सबसे अधिक होता है। यही वह अवस्था है, जब बालक के भीतर मानवीय मूल्यों का समावेश हो सकता है, जिसके लिए भारतीय पुरातन भारतीय ज्ञान परंपरा में मूल्य-आधारित श • 131 ज्ञान-परंपरा से बालक को रू-ब-रू कराना अत्यंत आवश्यक है, परंतु आज आवश्यकता है कि मूल्यों का समावेश इस प्रकार किया जाए कि जो छात्र को आधुनिक शिक्षा व्यवस्था में आत्मचितं न की ओर ले जा सके, केवल उसे बिना सोच-समझ वाला रेस का घोड़ा बनने से बचाए। मूल्य-आधारित शिक्षा ही छात्र को संवेदनशील, चैतन्य मानव बना सकती है। कई देशों की आधुनिक मूल्यरहित शिक्षा प्रणाली के कारण ही आज संपूर्ण विश्व में छात्र कम उम्र में अपनी चेतना खो रहे हैं और आत्महत्या, आतकं वाद, लूटपाट, व्याभिचार, नशा इत्यादि अंधकार की ओर बढ़ते चले जा रहे हैं, इसका एकमात्र कारण मूल्यविहीन शिक्षा प्रणाली का होना है, जिसके कारण छात्र स्वयं का आत्मघात कर रहे हैं। प्राचीन भारतीय ज्ञान प्रणाली में छात्रों को इस विष से बचाने के लिए अमृतरूपी गुरु होते थे, जिनकी छत्रच्छाया में छात्र आत्मबल प्राप्त करते थे, गुरु उन्हें जीवन की हर कसौटी को पार करने के लिए उपयुक्त बनाते थे। वेद-शास्त्रों व मूल्यों के द्वारा उन्हें सशक्त बनाया जाता था। उन्हें ऋग्वेद की संहिता, "सं गच्छध्वं सं वदध्वं सं वो मनांसि जानताम्। देवाभागं यथा पूर्वे संजानाना उपासते॥" (इष भास्य) अर्थात सायं-सायं एक स्वर में बोले। हमारा मन एक जैसा हो हमारे विचार समान हो। हम मिलकर रहे। प्राचीन समय में हमारे देवताओं का यही आचरण था हम ऐसा ही आचरण करें। जनमानस के हृदय में समरस होने को बढ़ावा देता है। आज भी यह संभव है बशर्तेफिर से पवित्र गंगारूपी ज्ञानधारा से छात्रों को अवगत कराया जाए। भारत के असीम, अद्वितीय और अनंत ज्ञानधारा को छात्रों के मन-मस्तिष्क में आरोपित करके उन्हें पाश्चात्य जगत् का अनुकरण करने से रोकना होगा, जिससे वो अपनी जड़ों को फिर से प्राप्त कर सकें। छात्रों के अंदर मूल्य-आधारित शिक्षा का समावेश करके उन्हें धैर्यवान, संयमी, परोपकारी, मानवतावादी व आत्मचितं न

(IJPS) 2022, Vol. No. 14, Jul-Dec **e-ISSN: 2455-6270; p-ISSN: 2455-7455**

करनेवाला बनाकर, भारतीय ज्ञानपरंपरा को आगे बढ़ाया जाए व आधुनिकता की चकाचौंध के दलदल से बाहर निकाला जाए। छात्र अपने मूल्यों व ज्ञान-परंपरा को समझने वाले बनें व भारत भूमि को फिर से एक बार 'विश्वगुरु' के रूप में सिरमौर बनाएँ तथा 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की अवधारणा का पुनः मार्ग प्रशस्त हो।